'किसकी प्यास?'

डॉ. राधेश्याम शुक्ल

'किसकी प्यास?'

किसकी प्यास,
पी गई, तेरा गंगाजली शरीर नदी माँ!
तुझे पूजकर परंपराएं,
लहरों से आँचल भरती थी,
दूध-पूत वाली मनौतियाँ,
कितनी 'सगुनौटी' धरती थी।
तुझसे ही 'कछार' की,
सँवरा करती थी तकदीर नदी माँ!

तू ही तो थी, त्यौहारी तिथियों की
मुँहबोली हमजोली,
नदी-नाव संयोग रचनाकर,
तूने दसों दिशाएँ खोली।
तू खुद में भूगोल,
और थी इतिहासी तहरीर नदी माँ!
पथराये तटबन्धों पर है,
रेत लिख रही करूण कहानी,
सन्नाटे खोजते फिर रहे,
'जलमाया' की कहीं निशानी।
मौसम का नवाब करता है,
इस पर भी तक़रीर नदी माँ!
यह कैसा 'ग्लोबल विकास' माँ,
रही-सही अस्मिता सिरानी,
लोगों की आँखों तक में भी,
बचा बूँद भर रहा न पानी।
कौन सुनेगा यहाँ,
तुम्हारे 'जलपाँखी' की पीर नदी माँ।

सन्दर्भ-पानी और प्यास

छीज रही है दिन-ब-दिन, पानी की ओकात।
धूप उठाये फिर रही, यह आदम की जात।।

निरी प्यास की मछलियाँ, गिरा रही हैं गाज।
बूँद बची है, देखिए, क्या होता है आज।।

रेत नहाई है नदी, धूल नहाई प्यास।
घाट-घाट पर आँधियाँ, बूझ रही इजलास।।

पानी रोया फूटकर, लगी चतुर्दिक् आग।
मछली, तू सोयी पड़ी, जाग सके तो जाग।।

बचा न पाया आदमी, करके सौ तदबीर।
रजवाड़ों ने लूट ली, पानी की जागीर।।

निर्मल पानी जल गया, जहर-लहर पर दाग।
उजलापन कोयला हुआ, लगी नदी में आग।।

रेत हँस रही देखकर, 'पानी' पर तकरार।
'पानी' की बातें करें, 'बे-पानी' किरदार।।

बिलख उठी प्यासी नदी, कर 'मीनन' का ख्याल।
मछुवारे तट पर खड़े, लिये रेशमी जाल।।

नदी हुई क्यों निर्जला, मथित, व्यथित क्यों ताल।
दरका पोखर गाँव का, क्यों बन गया सवाल।।

जल धारायें थक गई, झुका-झुकाकर काँध।
'तन्त्र नहीं माना मगर, दिया दर-ब-दर बाँध।।

सोख रही है आँख का पानी तक, यह प्यास।
हमें कहाँ ले जाएगा, यह ग्लोबली विकास।।

रूके 'प्यास' की ये हवस, बचा रहे सम्मान।
बचा रहे 'पानी' सदा, बचा रहे इन्सान।।

तपी प्रगति की चिचिली, धूप, दे गई प्यास।
छीन लिया भूगोल ने, 'पानी' का इतिहास।।

करो जुगत पानी बचे, नदियाँ, तीरथ, धाम।
बिन पानी के आएगी, 'जिन्दगानी' किस काम।।

संपर्क करें:
डॉ. राधेश्याम शुक्ल
392, एम.जी.ए., (नजदीक डी.सी.एम. गेट), हिसार-125001 (हरियाणा); मो.नं. 09466640106